पुराण और प्राचीन साहित्य - भक्तिकाव्य धारा

DR. CHILUKA PUSPHALA

DEPARTMENT OF HINDI
MOUNT CARMEL COLLEGE AUTONOMOUS
58, PALACE ROAD, BANGALORE 560052

सामान्यतः 'पुराण' शब्द का अर्थ प्राचीन कथाओं के संग्रह से समझा जाता है। अमरकोशकार ने पुरातन और चिर नवीन स्वरूप की ओर संकेत करते हुए कहा है -

पुराणे प्रतनप्रत्न पुरातन चिरन्तनम् ।
प्रत्यगोअभिनवो नव्य नवीनो नूतनो नवः ॥

कतिपय पुराणों में भी शब्द की परिभाषा देते हुए कहा गया है ---

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंश मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैन पुराण पंचलक्षणम् ॥

अर्थात् जिस ग्रन्थ में सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित का वर्णन हो उसे पुराण कहा जाता है। किन्तु पुराणों में मात्र सर्ग, प्रतिसर्ग, अथवा राजवंशावली का वर्णन ही नहीं है वरन् हमारी संस्कृति, हमारा सम्पूर्ण लौकिक एवं धार्मिक जीवन सन्निहित है।

भारत मुख्यतः धर्मप्रधान देश है। अतः तदनुरूप प्राचीन भारतीय साहित्य का विकास भी धार्मिक रूप में हुआ है। इसके अतिरिक्त साहित्यकों का दृष्टिकोण आदेशात्मक था। एक ओर उनके जीवनदर्शन का एक रूप उनकी धर्मसाधना थी, दूसरी ओर लौकिक जीवन में भी उदात्त मानवीय गुणों को ही महत्ता मिली थी। परिणामस्वरूप संस्कृत साहित्य में केवल उदात्त चरित्र ही नाटक तथा महाकाव्य के नायक बन सकते थे। संस्कृत साहित्य में पुराणों की कथाएँ को माध्यम बना कर नाटक तथा काव्य ग्रन्थ रचना की व्यापक परम्परा वर्तमान है।

आदिकाल साहित्य:-

हिन्दी साहित्य के आदिकालीन का साहित्य मुख्यतः दो वर्ग का है पहला ज -ैन, बौद्ध तथा वामपंथ का धार्मिक साहित्य और दूसरा तत्कालीन वर्षश को दो आधार बना कर लिखा गया रासो काव्य। अतः तद् युगीन परिस्थितियों के परिणामस्वरूप उस समय की रचनाओं के नायक थे महावीर -, बुद्ध तथा ऐतिहासिक वीर। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार ईसा की सातवीं आठवीं शताब्दी में ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर काव्य ग्रन्थ लिखने की प्रथा खूब चल पड़ी थी। लेकिन आदिकाल की मुख्य काव्य प्रवृत्ति पौराणिक न होते हुए भी पौराणिक कथाओं के प्रयोग के उदाहरण प्राप्त होते हैं।

'पृथ्वीराजरासो' यूपी वीर काव्य है -, लेकिन उसमें भी राम कथा का वर्णन किया गया है।

सुमनिगणि कृत 'नेमिनाथरास' में कृष्ण कथा को माध्यम बनाया गया है। सारी अग्रवाल के

'पद्मचरित' में पद्मचरित की कथा को स्वीकार करके जैन धर्म के महत्व को स्थापित किया गया है।

इसी प्रकार शालिभद्र सूरि की रचना 'पंचपाण्डव चरित रास' तथा जाखू मैंग्यार कृत 'हकिचन्द्र पुराण' में क्रमशः पंच पाण्डवों तथा हरिश्चन्द्र की पौराणिक कथा को स्वीकार किया गया है। वस्तुतः हिन्दी साहित्य में पुराण कथाओं का आश्रय सबसे अधिक भक्तिकाल में लिया गया है। भक्तिकाल का साहित्य मुख्यतः धार्मिकता से अनुप्राणित है और तत्कालीन धार्मिक चेतना को पुराणों से अलग करके नहीं देखा जा सकता है।

भक्तिकाव्य धारा में पौराणिक आधारभूमि: -

भक्तिकाल में प्रवाहित होने वाली सगुण भक्ति की अजस्र धारा की अनुभूति पद्धति का उद्गम यद्यपि दक्षिण के आसार भक्तों की साधना पद्धति से माना जा सकता है परन्तु इस युग में आकर जिस रूप में यह भक्ति विस्तृत

होती है -- उसके लिए धरती पुरणों में ही मिलती है । विशेषतः पुरणों के अवतारवाद की धारणा ने भक्ति के विकास में विशेष पृष्ठभूमि का काम किया है --

'अवतारों' में ही लीला का विस्तार होता है, जिसका श्रवण और मनन भक्ति का प्रधान साधन है । अवतारों के विविध लीलाओं के फलस्वरूप ही विविध नामों का उद्भव होता है जिनका कीर्तित और जप भक्ति के लिए आवश्यक साधन हैं ।

वस्तुतः सगुण भक्ति के मार्ग के मूल में अवतार की कल्पना है । विशेषतः कृष्ण भक्ति साहित्य का कथातत्त्व तथा विचारतत्त्व पूर्णतः पौराणिक है । कृष्ण भक्ति को सबसे व्यापक रूप में स्वीकार करने वाले हिन्दी के भक्तिकवि सूरदास का सम्पूर्ण काव्य साहित्य श्रीमद् भीगवतपुराण के अनुसार है -। कृष्ण के प्रति नवधाभक्ति का स्वरूप, भक्ति के अन्तर्गत जीव, ब्रह्म एवं जगत सम्बन्धी धारणाएँ, कृष्ण से सम्बद्ध कथाएँ और कथा प्रसंग की विविध प्रसंग, कृष्ण की विविध लीलाएँ, कृष्ण कथा के विविध पात्रों का निरूपण, पुराणों को उपजीव्य ग्रन्थ मानकर किया गया है ।

वस्तुतः भक्तिकाल में कृष्ण का जो लीला अवतारी रूप विकास हुआ , वह महाभारत के अनुसार न होकर श्रीमद् भागवतपुराण तथा विष्णु पुराण के अनुसार है । विष्णु के विविध अवतारों का वर्णन तथा उनके प्रति श्रद्धा एवं भक्ति का प्रदर्शन भक्तिकाल के लगभग सभी कवियों ने किया है , जिसके लिए उन्होंने पुराणों का अधार ग्रहण किया है । पुराणों में जिस नवधाभक्ति का उल्लेख किया गया है उसमें भक्ति के नौ पूर्णों में श्रवण --, कीर्तन या आराध्य देव के गुण - कथन का भी विधान है। एक ओर अपने आराध्य देव के प्रति प्रत्यक्ष रूप में आत्मनिवेदन करना भक्ति प्रदर्शन का एक रूप है, वहाँ दूसरी ओर उनके गुण कथन अर्थात् चरित का वर्णन भी भक्ति भावना को व्यक्त करने का मुख्य साधन है । इस युग की भक्ति में राम और कृष्ण को दो भिन्न भाव धाराओं करे आधार के रूप में स्वीकार - किया गया था, इसीलिए उनके दो भिन्न रूप परिलक्षित होते हैं । राम शाखा में राम के गरिमीमय -भक्ति -, मर्यादा पुरुषोत्तम रूप की अवतारण हुई जो प्रबन्ध -- काव्य के अधिक अनुकूल था । कृष्ण काव्य में वस्तुतः कृष्ण के माधुर्यपरक रूप के प्रति जिस रागात्मक भक्ति को स्वीकार करके सूरदास तथा नन्ददास आदि कृष्ण भक्ति कवि चले थे बन्धुसमं प्र - दृष्टि नहीं थी । अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में कीर्तन तथा दैनिक चर्या के रूप में अष्टकालिक सेवा विधान उनके लिए अनिवार्य था -। कृष्ण भक्ति कवियों की दृष्टि अधिक केन्द्रित होने के कारण कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन की कथा के स्थान पर उनके बाल और किशोर सीमाओं का ही वर्णन अधिक किया गया है । राम और कृष्ण को आधार बनाकर विकसित होने वाली यह भक्ति पथ - धारा आगे चल कर अनेक रूपों में अपना विकास - बनाती है। सबसे अधिक रूप कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय में होते हैं । इन सम्प्रदायों में भी कृष्ण के प्रति विभिन्न भावों की भक्ति के कारण अनेक उप सम्प्रदायों की स्थापना हुई है ।

इन सम्प्रदायों में कृष्ण की भक्ति के अनुरूप कृष्ण कथा में अनेक अवान्तर कथाओं, नवीन प्रसंगों तथा नये पात्रों का विकास हुआ है । परन्तु इस विकास क्रम में एक बात विशेष उल्लेखनीय है राधा को शक्ति के रूप में स्वीकार करने के कारण कृष्ण के स्थान पर राधा की प्रधानता है जाती, कारण ये कविगण राधा के माध्यम ही कृष्ण के पास तक पहुँचना चाहते हैं । इसी तरह राम भक्ति धारा में भी तुलसी के दास्यभाव की भक्ति के समानांतर ही राम को केन्द्र में रखकर मधुर भाव का आरोपण भक्तिकाल में ही प्रारम्भ हो चुका था ।

रीतिकालीन प्रवृत्तियों का प्रभाव:

भक्तिकालीन काव्य में धार्मिक भावना ले गृहीत पुराण कथाओं का विकास जिन रूपों में हुआ था वह रीतिकाल में अक्षुण्ण न रहा सका । वस्तुतः उस युग की मूल प्रवृत्ति श्रृंगारिकता ने पुराण कथाओं की आत्मा, उसके वाह्य स्वरूप तथा पौराणिक पात्रों के - चरित्र में अन्तर उपस्थित कर दिया था। भक्ति की उदात्त भावना की क्रोड़ से विकसित इस श्रृंगारपूर्ण ऐहिक दृष्टिकोण के - लिए रीतिकालीन परिस्थितियाँ भी उत्तरदायी थी ।

वस्तुतः भारतीय इतिहास यह में मुगलशासन का संध्याकाल था । औरंगजेब की शासन नीति में उसके साम्राज्य के पतन की सभी सम्भावनाएँ सन्निहित थी । औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् ही केंद्रीय मुगल शासन छिन्न भिन्न - होने लगा था । हिन्दू जनता तो युगों ले परतन्त्र थी । परतन्त्रता वैसे भी नैतिक पतन का कारण बनता है । यही कारण है कि राजनैतिक परवशता एवं आतंकपूर्ण वातावरण के परिणाम स्वरूप उस समय के जन जीवन में जिस अनिश्चितता - की भावना ने घर कर लिया था उसने तत्कालीन जनता को हार्दिक तथा नैतिक दृष्टि से पतनोन्मुख बना दिया था । धर्म उनके लिए पावन अनुभूति का विषय नहीं था वरन् जीवन को भुलावा देने का साधन । इसके अतिरिक्त उस समय के कवि लौकिक सुखों से निर्लिप्त मंदिरों से सम्बद्ध साधु सन्त नहीं थे, जो भक्तिकाल के कवियों के सहश उस परतन्त्रता के निराशापूर्ण वातावरण में भी अन्तर की ज्योति से प्रकाशमान भगवद्भक्ति का आधार ग्रहण करके आत्मोन्नति के उच्च शिखर पर पहुँच सके ।

अतः इन नरेशों के मनोरंजन के लिए जिस प्रकार के साहित्य की रचना की गई है वह ऐहिकतामूलक थी | तत्कालीन विलासिता के अनुकूल रीतिकाल का मुख्य वर्णन शृंगार रस - विषय - वियोग दोनों ही - संयोग) पक्ष(, नायिका भेद, नखशिख वर्णन -, षट्श्रुतु वर्णन, अष्टयाम वर्णन तथा काव्य शास्त्र के विभिन्न अंगों और उपांगों का विवेचन -- था | अतः भक्तिकाल का शृंगार भक्ति का उपकरण मात्र था, प्रेरक शक्ति के कवि की आन्तरिक भक्ति भावना थी, पर रीतिकाल में प्रेरण का स्वरूप भक्ति न होकर शृंगार हो जाता है | रीतिकालीन विलासिता ने परम्परा से परम्परा से प्राप्त से माधुर्य भक्ति के उदात्त रूप को पंकिल कर दिया | शृंगार रस के भेद प्रभेद के आधार - पर भक्ति की रम्य अनुभूति के रूप में वर्णित कृष्ण राधा, सीता क्रीड़ाओं को अत्यन्त लौकिक स्तर पर व्यक्त - राम के प्रेम - किया जाने लगा।

जिस प्रकार विभिन्न जलाशयों में संचित जल सूर्य किरणों विदारी क्रमशः खिंचता हुआ आकाश की ओर जाता है वहाँ समुज्ज्वल बन बादलों का रूप धारण कर लेता है उसी प्रकार लौकिक साहित्य का शृंगारिक रस भी अक्सर उच्च आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच गया, एक बार अधिक विशुद्ध भी बन गया किन्तु फिर, अन्त में लौटकर उसे मलिन तथा पंकिल भी हो जाना पड़ा और आपने फँस जाने के कारण अवतारी राधा कृष्ण तथा सीता काम की मिट्टी पलीद हो गई | नायक भेद के - नायिका - अन्तर्गत विभिन्न नायकों के वर्णन में इन पौराणिक दिव्य पात्रों का नितान्त लौकिक वर्णन हुआ ही है, उसके साथ उनके सौन्दर्य वर्णन में " नखशिख " वर्णन प्राणाली के अनुसार अंग उपांगों का वर्णन किया गया है -, तो षट् श्रुतु तथा बारहमासा के अन्तर्गत प्रेम सन्दर्भों का वर्णन भी समाविष्ट हुआ है |

राम काव्यधारा

भक्तिकाल में स्थापित राम काव्य - भक्ति - की धारा में भी प्रवहमान थी | विशेषतः रसिक सम्प्रदाय का विकास इस परिस्थिति में अधिक हुआ है और इससे सम्बन्धित विपुल साहित्य की रचना भी हुई है | इस विलासितापूर्ण वातावरण में राम तथा सीता के विविध प्रेम क्रीड़ाओं के वर्णन में नवीन - प्रसंगों की उद्भावना होती है | विशेषतः कृष्ण जीवन से सम्बन्ध विविध विहार लीलाओं को भी राम के साथ संयुक्त किया गया है | राम के विहार - लीलाओं के वर्णन के समय जलविहार, वनविहार, उपवनविहार, हिंडोला, फाग, यहाँ तक कि राम सीता के चौपड़ खेलने का - वर्णन भी प्राप्त होता है | राम तथा कनक भवन वासिनी सीता की विभिन्न सखियों के साथ "रसके वर्णन का विशेष प्रचलन " इस सम्प्रदाय के कवियों में था। श्री कृपानिवास ने पूर्ण में वर्णित रस के आधार पर - में श्रीमद् भागवत " रसपद्धति " 'महारास' का वर्णन किया है | कृष्ण की विविध लीलाओं का अनुकरण इस काव्य धारा में इतना अधिक हुआ है कि राम भी पनघट पर अयोध्या की नारियों को छोड़ते चलते हैं ---

" पनघट पर हमको मोहि ले दशरथ के प्यारे साँवरिया |

जलभरत धरत कटि करक गई सरेखत सारी सरकि गई निरखत छवि | "

इसी प्रकार रसिक भक्त कवियों ने राम और सीता के युगलकेला वर्णन के समय किसी प्रकार के संकोच का अनुभव नहीं - किया है और प्रेम का काम शास्त्रीय स्तर का अमर्यादित वर्णन किया है -- -

" जब लाडली कटि लचकि मचकति झपकते पिय की वोर ,

तब जात बलि लाइलौ गति होत चन्द चकोर ||

जब परसि बात उरोज अंचल उड़ंत सिय सकुचाई ||

पुनि हेर पिय तन नमित चरवरही रसन दसन दबाय ||

लखि हाव पिय उर भाव सरसत चाव चित उमगात |

सो निरखि दम्पति सुख सरस अलि मुदित उमगा गात ||

साथ ही इस समय की परिपाटी के अनुसार राम सीता नखशिख वर्णन और राम की अष्टयाम लीलाओं का वर्णन भी प्राप्त है |

कृष्ण काव्यधारा:

यह पहले भी कहा जा चुका है कि मुक्तक काव्य की अोर झुकाव होने के कारण कृष्ण काव्य में कथात्मक संकोच वर्तमान है | भक्तिकाल में वर्णित कृष्ण की बाल तथा किशोर लीलाओं में रीतिकालीन कवियों की मानसिक निष्ठा मात्र कृष्ण गोपी - राधा - से सम्बद्ध शृंगार लीलाओं तक ही सीमित रही |

रीतिकाल में नखशिख -सौन्दर्य वर्णन की प्रवृत्ति खूब प्राप्त होती है -। यहाँ तक की केवल 'नखशिख', तोषनिधी का नखशिख वर्णन को ध्यान में रखकर अनेक पुस्तकों की रचना हुई है। कुलपति मिश्र का 'नखशिख', तोषनिधी का 'नखशिख', ग्वाल कवि कृत कृष्ण जी का 'नखशिख', चाचा हित वृन्दवादनदास का 'नखशिख', गोकुलनाथ का 'राधा 'नखशिख', कवि चन्द्रशेखर का 'नखशिख' आदि विशिख वर्णन की रचनायें हैं जिसमें कुछ तो मात्र कृष्ण राधा के 'नखशिख' आदि नखशिख वर्णन से सम्बन्धित हैं और कुछ में नखशिख वर्णन के अन्तर्गत राधा कृष्ण के सौन्दर्य का भी वर्णन किया गया है।

नखशिख वर्णन की यह परम्परा इतनी कुरूचीपूर्ण हो जाती है कि कवि दिवाकर ने राधा के मुख के शीतल के दाग का वर्णन भी किया है ----

**" सीतला का दाग राधे मुख में लात केधों,
सांवरे प्रसंग के प्रस्वेद साफ साखी है ।"**

इसी प्रकार कृष्ण के अष्टयाम लीला का वर्णन भी हुआ है। देव का अष्टयाम, चाचा हितवृन्दवादन का अष्टयाम इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। कृष्ण राधा का सबसे अधिक उपयोग - नायिका भेद तथा श्रृंगार रस के - संयोग वियोग पक्ष की विविध दशाओं - के वर्णन के लिए हुआ है।

चाहे श्रृंगार का संयोग अथवा वियोग पक्ष हो या नायिका - भेद और नखशिख सौन्दर्य का वर्णन हो या फिर कृष्ण के अष्टांग लीलाओं का वर्णन हो, कृष्ण के पौराणिक पक्ष से इन कवियों का विशेष सम्बन्ध नहीं रह जाता है।

भक्तिकाल की भाँति इस युग में भी राम - कृष्ण के अतिरिक्त विभिन्न देवी - देवताओं को आधार बनाकर काव्य - रचनाओं का सृजन हुआ है। राम और कृष्ण के पश्चात् सर्वाधिक लोकप्रिय देवता शिव ही है। यद्यपि यह रचानएँ विशुद्ध भक्तिभावना से लिखी गई हैं किन्तु इन पर भी रीतिकालीन प्रवृत्तियों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहा।

पौराणिक कथा - प्रयोग की दृष्टि से " परम्परागत स्वरूप " को सामान्यतः दो पूर्णों में समझ सकते हैं - एक ओर भक्ति भावना अथवा धार्मिक भावना ले पुराण कथाओं का ग्रहण और दूसरी ओर रीतिकाल की विशेष प्रवृत्ति श्रृंगारिकता तथा काव्य कला के प्रदर्शन के लिए भी पुराण कथाओं को माध्यम रूप में स्वीकार किया जाता है।

हिन्दी काव्य साहित्य में कृष्ण कथा का विकास मुक्तकों के रूप में ही हुआ था। अतः " रामचरितमानस" के ढंग से कृष्ण की सम्पूर्ण कथा के वर्णन की परम्परा कम मिलती है रीतिकालीन काव्य - प्रवृत्ति मुख्यतः मुक्तकपरक होने के कारण कृष्ण - काव्य की तरह रामकाव्य भी मुक्तक परक होने लगा था। रीतिकालीन श्रृंगारिक प्रवृत्तियों से निकट का सम्बन्ध होने के कारण कथाओं पर उनके अवशिष्ट प्रभाव के दर्शन भी हो जाते हैं। रीतिकालीन परम्परा के अनुकरण पर विभिन्न स्थलों के हिसाब से भी विहार - सीमाओं का वर्णन हुआ है। जल - विहार ही नहीं वर्णन तत्कालीन सामंती वातावरण के अनुसार "हौज - विहार " का वर्णन भी प्राप्त होता है ---

**आज दोड बैठे हैं भल मौन,
हौज किनारे भरे मौज सो प्यारी राधा रौन ॥
सावन भादों छुटत फुहार नीरधि तीन दिखाई ।
मीड रहे दोड तरह रस भीजे सखि लखि लेत बधाई ॥**

कृष्ण कथा काव्य में वियोग वर्णन की परम्परा में एक ओर लोकलाजगत व्यवधान से उत्पन्न विरह है, दूसरी ओर अक्रूर के साथ कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात् का प्रवास विप्रलम्ब हैं। वही दूसरे ओर श्री राधा कृष्ण दास यद्यपि भक्त थे किन्तु उनकी काव्य करवायें अल्प मात्रा में हैं। कवि ने एक पद में राधा की वन्दना की है तथा दूसरे में उनके मान का वर्णन किया है --

**" हों बलि जाऊँ मानिनी छवी पर,
बैठी भौंह चढ़ाय रिसभरी गोल तपोवन कर धर ।"**

सन्तरी तिलक में संग्रहीत श्री अम्बिकादत्त व्यास के होली सम्बन्धी पदों में राधा - कृष्ण का नामोल्लेख मात्र हुआ है जिस पर रीतिकालीन लौकिकता की छाप है।

आधुनिक हिन्दी - काव्य के प्रारम्भिक युग में लिखी गई विविध पौराणिक रचनाओं में पौराणिक पात्रों के निरूपित स्वरूप को रीतिकालीन परम्पराओं के विकास के रूप में समझ सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

हिन्दी साहित्य कोश '- ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी ,प्रथम संस्करण, 2020 वि 0 |

रामायण - श्री राधेश्याम कथावाचक, सन् 1969, बरेली |

राधाकृष्ण ग्रन्थावली - श्री रामाकृष्णदास सं श्याम सुन्दर दास, प्रथम संस्करण 1930, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग |